अन्तर्राष्ट्रीय वेदान्त मिशन की मासिक ई - पत्रिका
वेदान्त पीयूष
वर्ष २१
दिसम्बर - २०२१
प्रकाशन - १२

सम्पादिका :

स्वामिनी अमितानन्द सरस्वती

वेदान्त पीयूष

दिसम्बर २०२१

प्रकाशक

आन्तराष्ट्रिय वेदान्त आश्रम,

ई - २९४८, सुदामा नगर

इन्दौर - ४५२००९

Web : https://www.vmission.org.in

email : vmission@gmail.com

ॐ

सदाशिवसमारम्भाम्

शंकराचार्य मध्यमाम्

अस्मदाचार्य पर्यन्ताम्

वन्दे गुरु परम्पराम्

वेदान्त पीयूष

विषय सूचि

दिसम्बर 2021
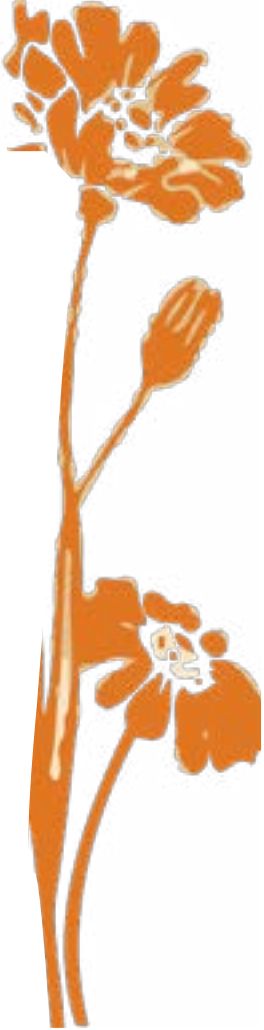
अज्ञानकलुषं जीवं
ज्ञानाभ्यासाद्विनिर्मलम्।
कृत्वा ज्ञानं स्वयं नश्येत्
जलं कतकरेणुवत्॥

(आत्मबोध श्लोक : 5)

अज्ञान से कलुषित जीव ज्ञानवृत्ति को उत्पन्न करके उसके निरन्तर अभ्यास से शुद्ध हो जाता है। यह ज्ञानवृत्ति जीव को शुद्ध करके स्वतः भी नष्ट हो जाती है, जैसे कतकचूर्ण पानी की गन्द को साफ करके स्वयं भी बैठ जाता है।

पूज्य गुरुजी का सन्देश

सूर्यदेवता – परमात्मा की दिव्य विभूति

सूर्यदेवता परमात्मा की दिव्य विभूतियों में से एक अद्भुत विभूति हैं। वे भगवान के प्रथम शिष्य हैं, सृष्टि की आदि में भगवान ने सर्व प्रथम उन्हें ही योगविषयक ज्ञान प्रदान किया। शास्त्रों के सभी सिद्धान्त को उनमें चरितार्थ होते हुए देख सकते हैं। वे कर्म का अप्रतिम आदर्श प्रस्तुत करते हैं। नियमितता व निष्कामता उनके जीवन के अभिन्न अंग है। प्रतिक्षण दूसरों को प्रकाश और कर्म की प्रेरणा देते हुए, वे स्वयं आत्म-प्रदर्शन की वृत्ति से शून्य हैं। सच्चा कर्म आत्म-प्रदर्शन की प्रवृत्ति से सर्वथा शून्य होता है। आत्म-प्रदर्शन कर्म के स्थान पर अहं को ही प्रतिष्ठित कर देता है, जिससे न स्वयं का कल्याण होता है और न ही अन्य

सूर्यदेवता – परमात्मा की दिव्य विभूति

का। अध्यात्मविकास के लिए यह अवरोध ही उत्पन्न करता है। अतः परमात्मस्वरूप इन सूर्यदेवता को अपना आदर्श जानते हुए स्वयं को निष्काम और निरभिमानता से युक्त कर्म में समर्पित करना चाहिए।

‘वास्तविक कर्म आत्म-प्रदर्शन की वृत्ति से शून्य होता है।’

जहां अपने ही किए हुए विस्तार को समेट लेना बड़े बड़े देवताओं के लिए भी महान प्रयत्न और लम्बे समय के द्वारा भी साध्य नहीं होता है, किन्तु सूर्यदेवता अपनी फैली हुई रश्मियों को इतनी सहजता से बिना परिश्रम के तत्काल उपसंहत कर लेते हैं। यह प्रवृत्ति से निवृत्ति की दिशा में यात्रा का अप्रतिम दृष्टान्त है। सूर्यदेवता की स्वतन्त्रता और सामर्थ्य उनके देवत्व और ईश्वरत्व का द्योतक है। सूर्य की उपस्थिति ज्ञान का विस्तार करती है, वही दिन होता है, लोग कर्म करते हैं। उनकी

सूर्यदेवता – परमात्मा की दिव्य विभूति

अनुपस्थिति अज्ञान अन्धकार है, जहां लोग अपने कर्तव्यकर्म छोड़ देते है। वही रात्रि है।

सूर्यदेवता अत्यन्त समर्थ है। आकाश में एकाकी भ्रमण करते हैं, और अपनी प्रकाशस्वरूपता की महिमा में स्थित रहते हैं। अपनी रश्मियों से पूरे विश्व को आलोकित करते हैं। उन्हींकी वजह से हम परमात्मा की सुन्दर अभिव्यक्ति रूप इस जगत को देखने मे समर्थ होते है। उन्हें समष्टि विराटपुरूष की चक्षु भी कहा गया है। वे तेज, उष्मा और उर्जा के पूंज और वास्तविक स्रोत है। समस्त वनस्पति और ओषधियों को विकसित होने हेतु उर्जा प्रदान करते है। उसमें रस का सिंचन करनेवाले है, तथा चन्द्रमा भी उन्हींसे अनुगृहीत होकर शीतलता और अमृत प्रदान करता है। सूर्य के अभाव की कल्पना करना अर्थात् जगत के प्रलय को ही देखना है।

सूर्यदेवता के ज्ञान और सामर्थ्य की महिमा
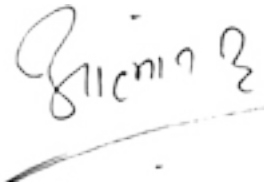
सूर्यदेवता – परमात्मा की दिव्य विभूति

प्रत्यक्ष तो हैं ही, किन्तु इसे और भी गहराई से देख सकते हैं कि वे प्रभु के अनन्य भक्त, भक्ति के आचार्य, ज्ञान की निधिरूप हनुमानजी के गुरु हैं।

ऐसे सूर्यदेवता के प्रति प्रात: उठने के साथ ही कृतज्ञता की अभिव्यक्ति करना सौभाग्य की बात है।

ओम् सूर्याय नम:!

मेरा हृदय.....

तुलसीदासजी भगवान से प्रार्थना करते है कि,

'हे प्रभो! मेरा हृदय न तो अयोध्या है,

न चित्रकूट और न ही दण्डकारण्य की तरह है।

मेरा हृदय तो लंका की तरह है।

जहां का स्वामी आपको भीतर

घुसने नहीं देना चाहता था,

किन्तु आप बलपूर्वक घुसकर बैठ जाइये।

तभी मेरा कल्याण होगा।'

लघु वाक्यवृत्ति

श्रुतिस्मृतिपुराणानां आलयं करुणालयम्।
नमामि भगवत्पादं शंकरं लोकशंकरम्॥

आदि शंकराचार्य द्वारा विरचित

कुल श्लोक 18

'अहं ब्रह्मास्मि' महावाक्य पर व्याख्या

लघु वाक्यवृत्ति

लघु वाक्यवृत्ति आदि शंकराचार्य द्वारा विरचित वेदान्त का प्रकरण ग्रंथ है। इस ग्रंथ में सब मिलाकर १८ श्लोक हैं। इस ग्रंथ में 'अहं ब्रह्मास्मि' इन महावाक्य पर संक्षिप्त व्याख्या होने से इसका नाम लघु वाक्यवृत्ति दिया गया है।

अखण्डार्थ बोधकानि महावाक्यानि। श्रुति के जिन वाक्यों से अखण्डता का बोध होता है, उसे महावाक्य कहा जाता है। अज्ञान में विद्यमान जीव खण्ड में जीता है। वह जीव, जगत और ईश्वर तीनों को पृथक् पृथक् मानकर जीता है। खण्ड में जीने का अभिप्राय है संकुचिता में जीना; जो कि अपने बारे में अपूर्णता की कल्पना से युक्त होकर जीना है।

लघु वाक्यवृत्ति

उसके उपरान्त पूर्ण होने के लिए बाहरी दृश्य जगत से पूर्ण होने की अपेक्षा से युक्त होकर सतत पुरुषार्थ करता है। अज्ञान व मोहवशात की गई निराधार कल्पना होने के कारण अन्तहीन संसरण को प्राप्त होता रहता है।

'संसार का कारण अपने बारे में अपूर्णता की धारणा है।'

समस्त शास्त्र का उद्घोष है कि मूल रूप से हम पूर्ण ही है। जो शाश्वत, सनातन, जगत के अधिष्ठानभूत ब्रह्म है; वह हम ही हैं। महावाक्य हमारे समक्ष इस तथ्य को उजागर करते हैं। यदि इसके शब्दार्थ को देखें तो निश्चित रूप से उसमें भेद व विरोधाभास प्रतीत होता है। एक ओर हम देशादि तथा सामर्थ्यादि की दृष्टि से परिच्छिन्न जीव है। दूसरी ओर ब्रह्म जो जगत के अधिष्ठानभूत, एक अखण्ड सत्ता है; जो कि अपने आपमें परिपूर्ण है। इन दोनों का ऐक्य किसी भी धरातल पर दीखाई नहीं देता है।

लघु वाक्यवृत्ति

अतः जहद्, अजहद्, भागत्याग आदिरूप विविध लक्षणाओं पर विचार करके भागत्याग लक्षणा का आश्रय लिया जाता है। उससे विरोध का समन्वय होकर वाक्य का अर्थ घटित होता है। वैसे तो महावाक्य अनेक हैं; किन्तु उनमें से प्रसिद्ध चार महावाक्य हैं, जिन पर आदि शंकराचार्य ने भाष्य लिखा है। वे चार महावाक्य हैं; १. प्रज्ञानं ब्रह्म - यह महावाक्य ऋग्वेद के अन्तर्गत के ऐतरेय उपनिषद् में आता है। इसका अर्थ है 'चेतना ही ब्रह्म है। २. तत्त्वमसि - यह वाक्य सामवेद के छान्दोग्य उपनिषद् में प्राप्त होता है। इसका अर्थ है वह ईश्वर तुम ही हो। यह उपदेशात्मक वाक्य है। ३. अयमात्मा ब्रह्म - यह वाक्य अथर्ववेद के माण्डूक्य उपनिषद् में प्राप्त होता है। इसका अभिप्राय है कि आत्मा ही ब्रह्म है। और ४.

लघु वाक्यवृत्ति

अहं ब्रह्मास्मि - यह यजुर्वेद के बृहदारण्यक उपनिषद् में प्राप्त होता है। इसका अभिप्राय है हम ही ब्रह्म है।

'अखण्डार्थ बोधकानि महावाक्यानि।'

इस ग्रंथ में इस यजुर्वेदीय बृहदारण्यक उपनिषद् के महावाक्य 'अहं ब्रह्मास्मि' पर व्याख्या की गई है। यात्रा सदैव वहीं से आरम्भ होती है कि जहां हम खड़े है। आज हम जीवभाव के धरातल पर स्थूलादि शरीर से तादात्म्य करके खड़े है। आचार्य उसका परिचय देते हुए ग्रंथ का आरम्भ करते हैं। उसके कारणभूत अज्ञान को दर्शाते हुए जीव का परिचय प्रदान करते हैं। उसके उपरान्त अवस्थात्रय का विवेक, नित्य अनित्य का विवेक प्रदान करते हुए हमारा ध्यान चेतन तत्त्व की ओर ले जाते हैं और अन्त में जगत के अधिष्ठानभूत ब्रह्म की तरह साक्षात करते हैं।

आगे के अंकों में प्रत्येक श्लोक पर विचार करेंगे।

गीता अध्याय : 10

विभूति योग

विभूति योग

गीता के दसवें अध्याय का नाम विभूतियोग है। कोई भी योग हर दृष्टि से कल्याणकारी होता है। अतः भगवान ने अर्जुन को सब प्रकार से योग का आश्रय लेने की प्रेरणा दी। योग किसी साधना विशेष का नाम नहीं है, किन्तु सत्य की अवेरनेस के साथ जो भी करे, वह प्रत्येक अभिव्यक्ति योग बन जाती है। भगवान ने अनेकों प्रकार के योग का वर्णन किया। यह एक होलिस्टीक अप्रोच है। इसमें हम जिस भी धरातल पर जीते हैं, उसे ही योग बना देते हैं। जब ऐसा फोकस होता है, तब भक्ति और ज्ञान होता है। ज्ञान में भी प्रेम तथा भक्ति में भी अवेरनेस बनाए रखना योग होता है। सतत अवेरनेस बनी रहे - यह

विभूति योग

सिद्धि आवश्यक है। इसी योग की सुन्दर विद्या विभूतियोग है।

भगवान ने बताया कि मस्ती से दुनिया में घूमे, सुन्दरता देखें, ऐश्वर्यमय चीजो को देखें, किन्तु यह देखना तब ही योग बन जाता है कि जब महान से महान चीज को देखकर व्यक्ति की विशिष्टता नहीं, किन्तु ईश्वर की महिमा देख पाएं। विविध अनुभूतियों को विक्षेप नहीं समझकर उसे योग हेतु साधन बना लें।

यह तब सम्भव होता है कि जब किसी भी विशिष्टता को ईश्वर से जोड़ने की आदत बना लें। कोई भी ज्ञान, शक्ति, सुन्दरता कला आदि देखने में समस्या नहीं, किन्तु समस्या व्यक्त वा व्यक्ति को महत्व देना है। उसमें अव्यक्त ईश्वर को वा उनकी कृपा को नहीं देख पाते है। जो यह

विभूति योग

देखता है, वही योगी है। योग का प्रयोजन व्यक्त से अव्यक्त में जगना है। जो व्यक्त देखकर अव्यक्त धरातल के ज्ञान का स्मरण वा अभ्यास नहीं रखता, वह उपाधि के जमेलों से दुःखी, नश्वर संकुचित बना रहेगा। इसी धरातल पर जीते है व महत्व देते हैं, तो उसीके परिणाम आसक्ति, अभिमान हैं। जब व्यक्त को देख रहे हैं; तब भी अव्यक्त का स्मरण रहे। जो व्यक्त के प्रति ही महत्व देते हुए, वह ईश्वर की उपासना करता हैं, तो उनको भी एक रूप में ही सीमित देखता है। उससे भगवान स्वयं अप्रसन्नता व्यक्त करते हैं कि 'अवजानन्ति मां.....'।

> 'व्यक्त को देखकर अव्यक्त धरातल का स्मरण होना चाहिए।'

साधना का स्वरूप यह हो कि दृष्ट को देखकर अदृष्ट, ज्ञानवान, करुणावान सत्ताको देख पाएं। अव्यक्त व्यक्त से बाधित नहीं

विभूति योग

होता है। जो ईश्वर को व्यक्तमात्र ही देखते हैं, उसे एक व्यक्त से अन्य व्यक्त को देखने में समस्या लगती है। क्योंकि एक दृश्य दूसरे को बाधित करता है। भगवान यहां ज्ञान देते हैं कि सब व्यक्त को, उसमें भी सर्वोत्कृष्ट देखने का ही लक्ष्य रखें। उस उत्कृष्ट को देखकर भी किसी की व्यक्तिगत विशिष्टता न समझें। अपने और अन्य के अहं की संतुष्टि, उसके दुष्परिणाम होते हैं, इससे बचना चाहिए। व्यक्तिप्रधान सोच ही संसार का द्वार है।

विभूतियोग की विशिष्टता यह कि अभिव्यक्ति को, उसकी सुन्दरता को देखें किन्तु उसमें ईश्वर के हस्ताक्षर देख पाएं। भगवान कहते हैं कि जहां पर भी तुम्हारा मन बलात् आकृष्ट हो, उसे ही मेरी विभूति जानों। हमारी विभूतियां अनन्त हैं; उसे बता पाना

विभूति योग

असम्भव है। हम उन सब से परे हैं। जीवन का एक पहेलू उसे व्यक्त से परे देख पाएं। अत्यन्त सुन्दर सूक्ष्म संवेदना से युक्त व्यक्ति को ही अव्यक्त की महिमा का ज्ञान होता है। जो व्यक्त की उपेक्षा करके अव्यक्त

'हर सुन्दर अभिव्यक्ति में परमात्मा के हस्ताक्षर देख पाना ही विभूतियोग है।'

को देखता है, उसने अव्यक्त को अन्जाने में व्यक्त बना दिया है, क्योंकि एक वृत्ति अन्य वृत्ति की बाधक हो जाती है। जब कि अव्यक्त किसी का भी बाधक नहीं हो सकता। अव्यक्त सब में समान, सब का आधार आत्मा व ईश्वर हैं। वही सृष्टा और सृष्टि है। सृष्टा की महिमा उनकी सृष्टि की उपेक्षा से नहीं ज्ञात हो सकती, अतः उसकी संवेदना उत्पन्न करें, तब ही उसके ज्ञान की महिमा व सम्भावना ज्ञात होगी। जिन्होंने यह सुन्दर सृष्टि बनाई, उन अव्यक्त में जगे, वे

विभूति योग

कभी भी बाधित नहीं होते है। प्रत्येक वस्तु उनकी महिमा बताता हैं।

ईश्वर के अस्तित्व का स्मरण-भजन भी बहुत कल्याणकारी होता है, उससे हम अकेले नहीं रह जाते हैं। अस्तित्व के ज्ञान के उपरान्त ही ईश्वर की महिमा का ज्ञान होता है। ईश्वर की महिमा के ज्ञान में विभूतियोग का महत्वपूर्ण योगदान है। भगवान ने यहां स्थूल, सूक्ष्म, इहलोक, परलोक आदि सभी धरातल पर ऐसी अनेकों विभूतियों का वर्णन किया। १. इसके माध्यम से सदैव ईश्वर की सन्निधि का अनुभव होता रहे। २. व्यक्त के धरातल से अव्यक्त में जगने की प्रक्रिया है। ३. महान से महान देखने, सोचने का अभ्यास होगा। इस प्रकार उससे बहुत शिक्षाएं प्राप्त होती है।

कहीं पर भी जाना अर्थात् यात्रा को योग बनाने की सोचे। अद्भुत

विभूति योग

दृश्य को देखते है तो हर वस्तु की संवेदना की शिक्षा देता है। वर्तमान में अच्छी तरह जगने की प्रेरणा देता है। कई चीजें सूक्ष्म तो सूक्ष्मता तक जगने की सवेदना होती है। यद्यपि भगवान ने अर्जुन के संस्कारों के अनुरूप उस समय की शिक्षा के अनुरूप, धार्मिक, पौराधिक परम्परा के धरातल पर, अध्यात्म, आदिभौतिक आदि सब धरातल की विभूतियां बताई, किन्तु उसके उपरान्त भगवान ने बताया कि यह सब को देखना अव्यक्त से जोडने हेतु है। अन्यथा उसका लाभ नहीं, क्योंकि इसका अन्त नहीं। यह हमारे छोटे अंश मात्र की प्रस्तुति, इसके पीछे का आशय कि उचित शिक्षा ली है, तो महान को देख ईश्वर के स्मरण का अभ्यास हो।

'सृष्टा की महिमा का ज्ञान सृष्टि की सुन्दरता को देखने से ही होता है।

विभूति योग

वस्तुत: व्यक्त की बहुत अच्छी, उत्कृष्टतम अभिव्यक्ति की सूक्ष्मतम संवेदना रखने के द्वारा ईश्वर की महिमा का ज्ञान प्राप्त करते हैं। आरम्भ में हतप्रभ किन्तु सतत ईश्वर का ज्ञान अनेकों को देखकर होता जाता है। महानतम देखने का अर्थ उसके आगे जाने की गुंजाईश नहीं, किन्तु इनके कारण की गहराई में देखना है।

यह ऐसी प्रवृत्ति जो कि निवृत्ति में पर्यवसित होती है। ऐसी बहिर्मुखता कि अन्तर्मुखता में पर्यवसित होती है। विभूतियोग के रहस्य नहीं जाननेवाला अन्तहीन भ्रमण करके व्यक्त के धरातल की समस्या, अभिमान, संकुचिता, भय व पराधीनता आदि से युक्त रहता है। महान से महान देखकर उचित शिक्षा लें और एक दिन तृप्त होकर मुक्त हो जाएं। उसके

विभूति योग

कारणभूत तत्त्व की महिमा जानकर रमे, तब हमने किसी चीज को देखा है।

'कर्मजनित सभी लोक काल के रेड्ल्म में विद्यमान होने से आवागमन वाले है।'

भगवान मानो विश्वभ्रमण पर गाइड बनकर सृष्टा की महिमा तक ले जाते हैं। अन्यथा घूमना परिस्थिति से पलायनमात्र है। भगवान अर्जुन के सारथि, स्वयं टुर गाईड है, वहां श्रीविजयभूति अवश्यंभावि व सार्थक है। यही विभूतियोग नामक दसवें अध्याय का सार व विवक्षा है।

(श्री रामचरित मानस पर आधारित)

श्री लक्ष्मण चरित्र

—१४—

बन्दउं लछिमन पद जल जाता। सीतल सुभग भगत सुखदाता॥
रघुपति कीरति बिमल पताका। दण्ड समान भयउ जस जाका॥

श्री लक्ष्मण चरित्र

परशुरामजी श्रीराम के साथ लक्ष्मणजी को भी क्षमामन्दिर के नाम से सम्बोधित करते हैं। इस प्रसंग में उनके द्वारा प्रयुक्त किया जाने वाला 'क्षमा मन्दिर' शब्द में विरोधाभास प्रतीत होते हुए भी बड़ा ही सार्थक और उद्देशपूर्ण प्रतीत होता है।

किसी भी मन्दिर के दो भाग होते है; एक वह जो हमारी दृष्टि के समक्ष है, जहां देवता की मूर्ति प्रतिष्ठापित की जाती है। परन्तु उसका दूसरा भाग जो हमारी दृष्टि से ओझल रहता है; वह है मन्दिर की नींव। मन्दिर के सारे सौन्दर्य और स्थिरता का भार इसी नींव पर आधारित है। श्रीराम यदि क्षमा-मन्दिर के

श्री लक्ष्मण चरित्र

प्रत्यक्ष भाग हैं, तो लक्ष्मण उसकी नींव हैं। राघव की क्षमाशीलता प्रत्यक्ष दिखाई देती है पर लक्ष्मण की अगोचर क्षमाशीलता का दर्शन करने के लिए अन्तरंग में प्रवेश करना होगा। परशुराम-लक्ष्मण संवाद के स्वरूप को हृदयंगम करते समय इस क्षमा-मन्दिर शब्द को ध्यान में रखना होगा। वस्तुत: इस सारे प्रसंग में रामानुज का व्यवहार क्षमा की भावना पर आधारित है। उनकी क्षमाशीलता धनुर्यज्ञ में उपस्थित राजाओं से लेकर परशुराम तक सब के लिए समान रूप से कल्याणकारी थी। वस्तुत: इस रहस्य को हृदयंगम करने के लिए परशुराम के आगमन की पृष्ठभूमि पर विचार करना होगा।

धनुर्भंग के पश्चात् भी आगत राजा इस तथ्य को स्वीकार करने के लिए प्रस्तुत नहीं थे। जिस धनुष को दस हजार राजा मिलकर भी उठाने में असमर्थ रहे, उसे एक किशोर अवस्था का

श्री लक्ष्मण चरित्र

राजकुमार सहज उठाकर तोड़ डाले, यह उनके लिए अविश्वसनीय व अकल्पनीय ही था। अवश्य इसके पीछे कोई ऐन्द्रजालिक षड़यन्त्र होगा, ऐसी उनकी धारणा थी। अतः वे इस निर्णय को मानने के लिए प्रस्तुत नहीं थे। उन्होंने निर्णय कर लिया कि, वे युद्ध में इस राजकुमार के पौरुष की परीक्षा करेंगे। उनका यह विश्वास था कि वे इन दोनों राजकुमारों को पराजित करने में सफल होंगे। वे शस्त्र सन्नद्ध हो जाते हैं। लक्ष्मण पूरी तरह जागरूक थे, वे इन राजाओं की चेष्टा देखते हैं और तब उनके समक्ष जटिल समस्या आ गई। इन राजाओं को विनष्ट कर देना लक्ष्मणजी के बाएं हाथ का खेल था। पर इस मधुमयी मंगलबेला में यह कैसे उपयुक्त हो सकता है! क्या प्रभु के पाणिग्रहण के पावन प्रसंग में अगणित ललनाओं को सौभाग्य से वंचित किया जाना चाहिए! क्या विधवा नारियों का करुण-क्रन्दन प्रभु को व्यथित नहीं बना देगा!

श्री लक्ष्मण चरित्र

क्या यह उनके आदर्श और उनकी मर्यादा के अनुकुल होगा! उन्हें ज्ञात था कि यह सब प्रभु की कीर्ति-कौमुदी को धूमिल बना देगा। ऐसी स्थिति में वे इन राजाओं को सहजता से रोकना चाहते थे। कुछ राजा सहमत अवश्य हैं; किन्तु इतने ही मात्र से इन्हें रोक पाना कठिन था।

इसी अवसर पर परशुराम का आगमन होता है। उस देखकर युद्ध के लिए सन्नद्ध राजागण पौरुष के महापूंज परशुराम को देखते ही सारी युद्ध की योजना को भूलकर अस्तव्यस्त होकर परशुराम के चरणों में साष्टांग प्रणाम करते हुए वे क्षमा-याचना करने लग जाते हैं। लक्ष्मणजी को परशुराम के चरणों में नत होने में कोई आपत्ति न थी। वे बड़े ही आदरभाव से

श्री लक्ष्मण चरित्र

उनके चरणों में प्रणत होते हैं। पर जब श्रीराम और परशुराम का संवाद आरम्भ होता है, तब वे सावधान हो जाते हैं। एक ओर शीलसिन्धु श्रीरामभद्र की विनम्रता भरी वाणी और दूसरी ओर था आक्रोश और दर्प का स्वर। इसकी अन्तिम परिणति क्या होगी, यह समझना रामानुज के लिए कठिन नहीं था। वे जानते थे कि राघव की विनम्रता से परशुराम का अहं सन्तुष्ट हो जाएगा। अन्त में वे अपने औदार्य का परिचय देते हुए राघव से यही तो कहेंगे कि मैं तुम्हारी विनम्रता से सन्तुष्ट होकर तुम्हें अभयदान देता हूं। और तब उसका प्रभाव उपस्थित राजाओं पर यही पड़ेगा कि राम भी हम लोगों की भांति परशुराम से भयभीत हैं। इसका परिणाम यह होगा कि परशुराम के जाते ही इनका युद्धोत्साह फिर उमड़ पड़ेगा, और इस युद्ध का अनिष्ट व अनर्थकारी फल होगा। ऐसी स्थिति में परशुराम की पराजय होना - यह इन मूढ़ताग्रस्त राजाओं

श्री लक्ष्मण चरित्र

के लिए भी कल्याणकारी है। इसलिए साधारण शिष्टाचार के प्रतिकूल होते हुए भी वे प्रभु और परशुराम के वार्तालाप में हस्तक्षेप करते हैं। इस हस्तक्षेप में उनके दो ही उद्देश्य थे और उनकी कल्पना के अनुकूल वे पूरे हुए। इसीलिए परशुराम के आक्षेप-भरे वाक्यों का उत्तर व्यंग्यात्मक शैली में देते हुए भी वह इस बातचीत को युद्ध में परिणत नहीं होने देते। इस प्रसंग में असीम धैर्य और क्षमाशीलता का परिचय प्राप्त होता है।

विभूति दर्शन

—१८—

उत्तरकाशी

परं पूज्य स्वामी तपोवन महाराज
की यात्राके संस्मरण

जीवन्मुक्त
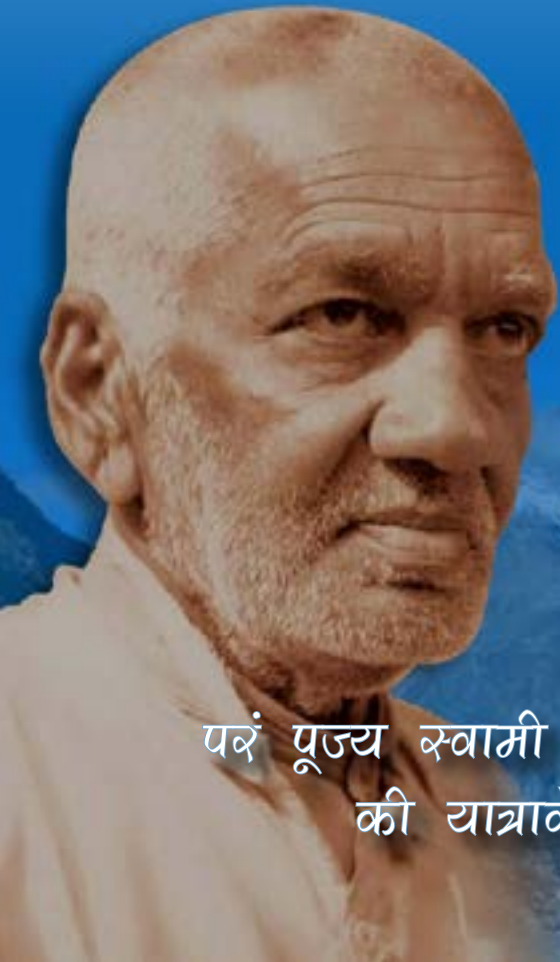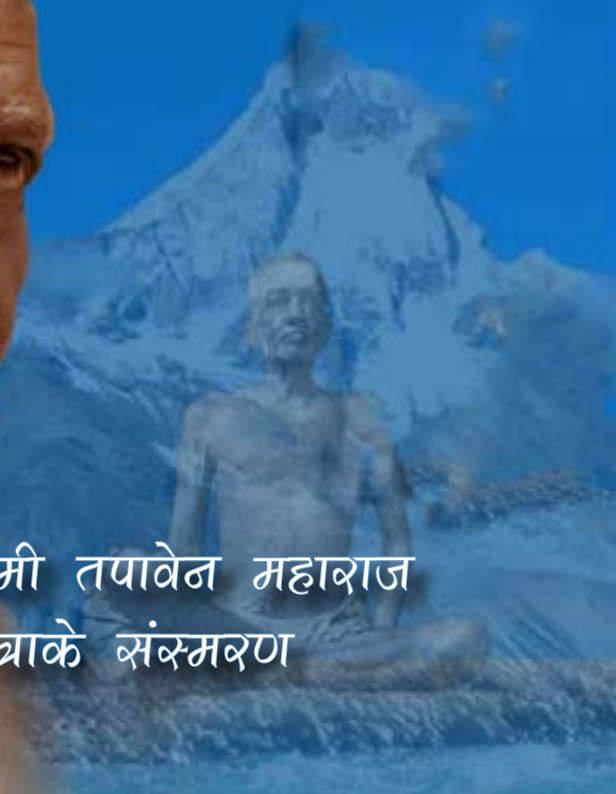
पर्वत सम्राट् हिमालय के बीच 'वारणावत' नामक एक पवित्र शाखा पर्वत विराजमान है। इसीको आधार बनाकर अनेक पुराण कथाएं लिखी गई हैं। इस उंचे पर्वत की चोटी देवदारु आदि दिव्य वृक्षोंसे ढकी हुई है। इसका प्रान्त देश कई तरह के रमणीय वृक्षों से ढका हुआ है। पहाड़ के प्रान्त भागों में इधर-उधर कुछ छोटे गांव भी हैं। पहाड़ के पूर्व और दक्षिण की घाटियों में महाभागा भागीरथी निरन्तर प्रणव ध्वनि के साथ प्रवाहित होती रहती है। यह पुराण प्रसिद्ध उत्तरकाशी क्षेत्र, वरुणा और असी नामक दो तीर्थ नदियों के बीच में, जो भागीरथी में आकर मिलती हैं, पंचकोश की सीमा में

जीवन्मुक्त

वारणावत पर्वत के एक ओर एक रमणीय भूमि है। इसी पहाड़के पूरब की तराई में जाह्नवी तट का एक मोहक मैदान ही काशीक्षेत्र का केन्द्र है। इस मैदान में पूर्वकाशी के समान श्री विश्वनाथ आदि कई देव निवास करते हैं,मणिकर्णिका से लेकर अनेक तीर्थ हैं, तथा पहाड़ी ब्राह्मणों की एक बस्ती है। यदि पूर्वकाशी नागरिकता और आडंबर में मग्न भारत का एक बड़ा नगर है तो उत्तरकाशी बिलकुल अनागरिक, अनाडंबर और पुरानी परंपरा में ही विराजमान शुद्ध सात्त्विक हिमालय का एक छोटा सा ग्राम है। पूर्वकाशी के विश्वनाथ यदि जनता की निबिड़ता, कोलाहल तथा पुष्पवृष्टि से सदा पीड़ित हैं तो उत्तरकाशी के विश्वनाथ जनशून्यता, नि:शब्दता में निर्विक्षेप, सर्वदा आनंद समाधि में लीन विराज रहे हैं। पूर्वकाशी के सन्यासी यदि बड़े बड़े आस्थानों पर बैठे विक्षेप बहुलता के कारण एक अशान्त जीवन बिता रहे हैं तो उत्तरकाशी के यतीन्द्र पहाड़ी गुफाओं एवं छोटी छोटी कुटियों में रहते हुए समाधियुक्त शांत जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

जीवन्मुक्त

लीजिए, उत्तरकाशी की पूर्व दिशा में हरि पर्वत तथा दक्षिण में पुराण प्रसिद्ध ऊँचा बालखिल्य पर्वत विश्वनाथपुरी को घेरे खड़ा हैं उस शांत गंभीर बालखिल्य पर्वत में कई अनोखी गुफाएँ दिखायी पडती है, जहाँ बालखिल्य आदि अनेक ऋषि पुंगव तपस्या में लीन रहा करते थे। श्रद्धालु बूढ़ेमहात्माओं का कहना है कि हिमालय के सभी प्रदेशों में आज भी ऐश्वर्यशाली महर्षि लोग गुप्त रूप में रहा करते हैं तथा पुराण ग्रन्थों का कहना है कि कलियुग में मनुष्य रूप की अपेक्षा वे पक्षी और वृक्षों के रूप में अधिक विहार किया करते है। वालखिल्य पर्वत के पास ही एक गंभीर वन के अन्दर नचिकेता का निवास स्थान भी दिखायी पडता है। यहा 'नचिकेता तालाब' नामक एक सरोवर नचिकता के नाम पर प्रसिद्ध है। अतः यह अनुमान किया जाता है कि श्रुति प्रसिद्ध नचिकेता की निवासभूमि यही प्रदेश है।

पौराणिक गाथा

दानवीर बलि

दानवीर बलि

असुरों के राजा बलि एक अच्छे दानवीर कहे जाते थे। किन्तु साथ ही उसे देने का भी अभिमान था। एक बार राजा बलि ने एक यज्ञ किया। तब भगवान विष्णु उनकी यज्ञशाला में वामन का रूप धारण करके आयें।बलि ने स्वागत किया और कहा कि, 'ब्रह्मचारी। आपको जो मांगना हो मांग लो। तब वामन ने कहा मुझे तो केवल तीन पग भूमि दे दीजिए। बलि ने आश्चर्य से मुस्कुराकर कहा कि, 'मुझे केवल तीन पग भूति ही दीजीए।' बलि कहता है कि तुम इतने बड़े दानी के पास आए हो और इतनी छोटी चरज मांग रहे हो। तब वामन बोलते है कि हम सतोषी लोग है; बस इतने से हमारा काम बन जायेगा।

वामन और बलि का संवाद शुक्राचार्यजी सुन रहे थे, उन्होंने बलि को एकान्त में ले जाकर पूछा कि तुम जानते हो ये कौन है? बलि ने कहा हमें तो एक

दानवीर बलि

तेजस्वी ब्रह्मचारी दिखाई दे रहा है। यदि यह भगवान है तो मेरा परं सौभाग्य है कि साक्षात् भगवान मेरे यहां मांगने चले आये। जब भगवान स्वयं ही मांगने आ गये है तो मैं उन्हें मना नहीं करूंगा, किन्तु अवश्य दूंगा।' यह कहते हुए बलि गद्‌गद हो गया। बलि उसे एक दीन भिक्षुक नहीं किन्तु तेजस्वी ब्रह्मचारी देख रहा है।

शुक्राचार्यजी उसे ईश्वर की तरह पहचान गए। किन्तु विडम्बना यह थी कि शुक्राचार्यजी को अपने शिष्य को भगवान की कृपा मिलने से ज्यादा उनके धन एवं राज्य सम्पत्ति पर अत्यधिक ममता थी। अत:जब बलि वामन को दान देने चला गया तो स्वंय शुक्राचार्यजी उसके कमण्डलु के छिद्रमें बैठ गये। कि जब जल ही नहीं गिरेगा तो दान भी नहीं दिया जा सकेगा और मेरे शिष्य का साम्राज्य बचा रहेगा। तब भगवान ने उसमें कुशा खोसकर शुक्राचार्यजी की एक आंख फोड़ दी। शुक्राचार्यजी के पास ज्ञान का नेत्र तो था, जिससे भगवान को पहचान गये किन्तु वैराग्य का नेत्र नहीं था। अत: वे शिष्य बलि को भी साक्षात् भगवान के

दानवीर बलि

सामने होने पर भी समर्पण करने से रोक रहा है।

दान लेते समय भगवान ने वामन से विराट् रूप को धारण कर लिया। आरम्भ में लेने वाला छोटा था और देनेवाला बड़ा। किन्तु जब तक लेने वाला बड़ा और देने वाला छोटड्ढ नहीं होता तब तक दान की सार्थकता नहीं हो पाती। दो पग में वामन ने पूरा बलि का साम्राज्य नाप लिया। अब एक पग भूमि बचने पर राजा बलि ने कहा कि मेरे पास और तो कुछ नहीं बचा है। अब केवल मेरा सिर ही बचा है। भगवान ने बलि के मस्तक पर अपना एक कदम रख दिया। तब दान पूरा हो गया। सारे ब्रह्माण्ड का दान देने पर भी जब तक अभिमान का दान नहीं दिया तब तकदान की सार्थकता नहीं होती। भगवान बलि पर प्रसन्न हो गये। और कहा कि अब तुम्हें स्वर्गादि जिसकी भी कामना हो हमसे मांग लो। तब बलि बोला कि, प्रभु! मुझे अब स्वर्गादि की किसी की भी कामना नहीं है। किन्तु आप इतनी कृपा कीजियेगा कि मैं जहां भी जाउं वहां आपके दर्शन होते रहे। बलि की प्रार्थना सुनकर आज भी भगवान उसके द्वारपाल एवं रक्षक के रूप में पहरा देते है।

Mission & Ashram News

Bringing Love & Light
in the lives of all with the
Knowledge of Self

आश्रम समाचार

१३ नवम्बर, २०२१ / जन्मदिन उत्सव

आश्रम समाचार

स्वामिनी समतानन्द / अन्वेषा शुक्ला

आश्रम समाचार

बालविहार द्वारा
नृत्यादि प्रस्तुति

आश्रम समाचार

भजन एवं स्तोत्रपाठ

आश्रम समाचार

जन्मदिन के आशीर्वाद
व शुभाशीष

आश्रम समाचार

तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

आश्रम समाचार

खेल एवं प्रतियोगिता

आश्रम समाचार

गंगेश्वर महादेव अभिषेक

१५ नवम्बर

स्वा. समतानन्दजी के जन्मदिन

आश्रम समाचार

गंगेश्वर महादेव
अभिषेक

१५ नवम्बर
२०२१

आश्रम समाचार

भण्डारे का आयोजन

आश्रम समाचार

बालविहार कला शिक्षण

आश्रम समाचार

दीपावलि मिलन समारोह

आश्रम समाचार

दीपावलि - लक्ष्मी पूजन

आश्रम समाचार

दीपज्योति नमोऽस्तु ते।

4th Nov
2021

आश्रम समाचार

दीपावलि / ४ नवम्बर २०२१

आश्रम समाचार

गंगेश्वर महादेव अभिषेक

आश्रम समाचार

प्राणी संग्रहालय, इन्दौर

आश्रम समाचार

आश्रम समाचार

आश्रम समाचार

आश्रम समाचार

प्राणी संग्रहालय, इन्दौर

Internet News

Talks on (by P. Guruji) :

Video Pravachans on YouTube Channel

- ~ Sundar Kand Pravachan
- ~ Monthly Satsang Videos
- ~ Prerak Kahaniya
- ~ Eksloki Pravachan
- ~ Sampoorna Gita Pravachan
- ~ Kathopanishad Pravachan
- ~ Shiva Mahimna Pravachan
- ~ Hanuman Chalisa
- ~ Atma Bodha

Audio Pravachans

- ~ Prerak Kahaniya
- ~ Atma Bodha
- ~ Sundar kand Pravachan

Vedanta Ashram YouTube Channel

Monthly eZines

Vedanta Sandesh - Dec '21

Vedanta Piyush - Nov '21

आश्रम / मिशन कार्यक्रम

प्रेरक कहानियां (ओनलाईन)

YouTube चेनल पर प्रसारण

आश्रम महात्माओं के द्वारा

आत्मबोध (ओनलाईन)

YouTube चेनल पर प्रसारण

पूज्य गुरुजी के द्वारा

प्रतिदिन प्रातः ७.00 बजे

(मंगलवार से शनिवार)

मुण्डकोपनिषद् प्रवचन (शांकर भाष्य)

आश्रम के संन्यासियों के लिए

पूज्य गुरुजी स्वामी आत्मानन्दजी